गोरख पाण्डेय

जन्म लगभग 1945 में
जिला देवरिया (उत्तर प्रदेश) के एक गाँव में।
साहित्याचार्य; एम० ए० (दर्शनशास्त्र)।

1969 में किसान आंदोलन से जुड़े और भोजपुरी में गीत लिखने की ज़रूरत महसूस की।

'भोजपुरी के नौ गीत' शीर्षक से एक संग्रह प्रकाशित।

सम्प्रति जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली में दर्शन में शोधकार्य और स्वतंत्र लेखन।

जागते रहो सोने वालो

जागते रहो सोने वालो

गोरख पाण्डेय
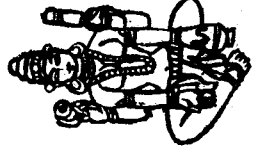
राधाकृष्ण

प्रथम संस्करण
1983

मूल्य
35 रुपये
14 रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

मुद्रक
कमल प्रिंटर्स
9/5866, सुभाष मौहल्ला 2
गांधीनगर, दिल्ली-110031

क्रम

होना आग का

गुहार

उन तमाम साथियों के लिए
जो जनता के मुक्ति-आंदोलन में
शरीक़ हैं।

फूल और उम्मीद

फूल और उम्मीद

हमारी यादों में छटपटाते हैं
कारीगर के कटे हाथ
सच पर कटी ज़ुबानें चीख़ती हैं हमारी यादों में
हमारी यादों में तड़पता है
दीवारों में चिना हुआ
प्यार ।

अत्याचारी के साथ लगातार
होने वाली मुठभेड़ों से
भरे हैं हमारे अनुभव ।

यहीं पर
एक बूढ़ा माली
हमारे मृत्युग्रस्त सपनों में
फूल और उम्मीद
रख जाता है ।

(1980)

हे भले ग्रादमियो !

डबडबा गयी है तारों-भरी
शरद से पहले की यह
अँधेरी नम
रात।
उतर रही है नींद
सपनों के पंख फैलाये
छोटे-मोटे हज़ार दुखों से
जर्जर पंख फैलाये
उतर रही है नींद
हत्यारों के भी सिरहाने।
हे भले आदमियो !
कब जागोगे
और हथियारों को
बेमतलब बना दोगे ?
हे भले आदमियो !
सपने भी सुखी और
आज़ाद होना चाहते हैं।

(1980)

जादू का टूटना

आग के ठंडे झरने-सा
बह रहा था
संगीत
जिसे सुना नहीं जा सकता था
कम-से-कम
पाँच रुपयों के बिना।
'चलो, स्साला पैसा गा रहा है'
पंडाल के पास से
खदेड़े जाते हुए लोगों में से
कोई कह रहा था।
जादू टूट रहा है—
मुझे लगा—स्वर्ग और
नरक के बीच तना हुआ
साफ़ नज़र आता है
यहाँ से
पुलिस का डंडा
आग
बाहर है पंडाल के
भीतर
झरना ठंडा।

(1981)

कैथर कला की औरतें

तीज-व्रत रखतीं धान-पिसान करती थीं
ग़रीब की बीवी
गाँव भर की भाभी होती थीं
कैथर कला की औरतें

गाली-मार ख़ून पीकर सहती थीं
काला अच्छर
भैंस बराबर समझती थीं
लाल पगड़ी देखकर घर में
छिप जाती थीं
चूड़ियाँ पहनती थीं
ओठ सीकर रहती थीं
कैथर कला की औरतें

ज़ुल्म बढ़ रहा था
ग़रीब-गुरबा एकजुट हो रहे थे
बग़ावत की लहर आ गयी थी
इसी बीच एक दिन
नक्सलियों की धर-पकड़ करने आयी
पुलिस से भिड़ गयीं
कैथर कला की औरतें

अरे, क्या हुआ ? क्या हुआ ?
इतनी सीधी थीं गऊ जैसी
इस क़दर अबला थीं
कैसे बंदूकें छीन लीं
पुलिस को भगा दिया कैसे ?
क्या से क्या हो गयीं
कैथर कला की औरतें ?
यह तो बग़ावत है
राम-राम, घोर कलिजुग आ गया
औरत और लड़ाई ?
उसी देश में जहाँ भरी सभा में
द्रौपदी का चीर खींच लिया गया
सारे महारथी चुप रहे
उसी देश में
मर्द की शान के ख़िलाफ़ यह जुर्रत ?

ख़ैर, यह जो अभी-अभी
कैथर कला में छोटा-सा महाभारत
लड़ा गया और जिसमें
ग़रीब मर्दों के साथ कंधे से कंधा
मिला कर
लड़ी थीं कैथर कला की औरतें
इसे याद रखें
और वे भी
जो इसे पीछे मोड़ना चाहते हैं
वे जो इतिहास को बदलना चाहते हैं
इसे याद रखें
क्योंकि आने वाले समय में
जब किसी पर ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं
की जा सकेगी
और जब सब लोग आज़ाद होंगे
और ख़ुशहाल
तब सम्मानित
किया जायेगा जिन्हें

स्वतंत्रता की ओर से
उनकी पहली क़तार में
होंगी
कैथर कला की औरतें ।

(1982)

ख़ून की नदी

लबर काका की रात-भर चलने वाली कहानी में
पीढ़ी-दर-पीढ़ी यादों के धुंधले किनारों से
होकर एक ख़ून की नदी बहती है
जिसकी धारा में तैरते हैं
गुलाब के ताज़ा फूल

एक राजकुमारी थी
सोलहो बरन की
अंग-अंग से उसके
जोत झरती थी

एक जवान माली था
जो उसे रोज़ गुलाब के ताज़ा फूल
भेंट करता था
राजकुमारी गुलाबों से बेहद प्यार करती थी
सो माली से भी प्यार करती थी
माली भी उसे बेहद प्यार करता था
वह उसे अपने हाथों से उगाये
गुलाब के फूलों से गढ़ी हुई लगती थी

बात राजा के कान तक पहुँची
और जैसा कि होना था

राजा ग़ुस्से से पागल हो गया
राजकुमारी नदी में फेंक दी गयी
माली कुचलवा दिया गया
हाथी के पैरों के नीचे

नदी से ख़ून की धारा फूट चली
जो आज भी बहती है
माली की आत्मा आज भी
राजकुमारी को
ताज़ा गुलाब के फूल भेंट करती है
जो धारा में तैरते चले जाते हैं

बचपन के हमारे सपनों में
कभी-कभी राजा मर जाता था
गुलाबों से सजी राजकुमारी की
माली से शादी हो जाती थी
मगर जब हम जागते
तो फिर वही कहानी शुरू हो जाती

हमारे गाँव की पीढ़ी-दर-पीढ़ी यादों के
धुँधले किनारों से होकर
ख़ून की नदी बह निकलती थी
जिसमें गुलाब के ताज़ा फूल तैरते थे।

(1982)

बच्चों के बारे में

बच्चों के बारे में
बनायी गयीं ढेर सारी योजनाएँ
ढेर सारी कविताएँ
लिखी गयीं बच्चों के बारे में

बच्चों के लिए
खोले गये ढेर सारे स्कूल
ढेर सारी किताबें
बाँटी गयीं बच्चों के लिए

बच्चे बड़े हुए
जहाँ थे
वहाँ से उठ खड़े हुए बच्चे

बच्चों में से कुछ बच्चे
हुए बनिया हाकिम
और दलाल
हुए मालामाल और ख़ुशहाल

बाक़ी बच्चों ने
सड़क पर कंकड़ कूटा

दुकानों में प्यालियाँ धोयीं
साफ़ किया टट्टीघर
खाये तमाचे
बाज़ार में बिके कौड़ियों के मोल
गटर में गिर पड़े

बच्चों में से कुछ बच्चों ने
आगे चलकर
फिर बनायीं योजनाएँ
बच्चों के बारे में
कविताएँ लिखीं
स्कूल खोले
किताबें बाँटीं
बच्चों के लिए।

(1978)

रुमाल

नीले पीले सफ़ेद चितकबरे लाल
रखते हैं रामलालजी कई रुमाल
वे नहीं जानते किसने इन्हें बुना
जा कई दुकानों से खुद इन्हें चुना
तह-पर-तह करते खूब सम्हाल-सम्हाल
ऑफ़िस जाते जेबों में भर दो-चार
हैं नाक रगड़ते इनसे बारम्बार
जब बॉस डाँटता लेते एक निकाल
सब्ज़ी को लेकर बीवी पर बिगड़ें
या मुन्ने की माँगों पर बरस पड़ें
पलकों पर इन्हें फेरते हैं तत्काल
वे राजनीति से करते हैं परहेज़
भावुक हैं, पारटियों को गाली तेज़
दे देते हैं कोनों से पोंछ मलाल
गड़बड़ियों से आजिज़ भरते जब आह
रंगीन तहों से कोई तानाशाह
रचकर मानो सुधार लेते हैं हाल

(1982)

बंद खिड़कियों से टकराकर

घर-घर में दीवारें हैं
दीवारों में बंद खिड़कियाँ हैं
बंद खिड़कियों से टकराकर
अपना सिर
लहूलुहान गिर पड़ी है वह
नयी बहू है, घर की लक्ष्मी है
इनके सपनों की रानी है
कुल की इज़्ज़त है
आधी दुनिया है
जहाँ अर्चना होती उसकी
वहाँ देवता रमते हैं
वह सीता है सावित्री है
वह जननी है
स्वर्गादपि गरीयसी है
लेकिन बंद खिड़कियों से टकराकर
अपना सिर
लहूलुहान गिर पड़ी है वह
क़ानूनन समान है
वह स्वतंत्र भी है
बड़े बड़ों की नज़रों में तो
धन का एक यंत्र भी है

भूल रहे वे
सबके ऊपर वह मनुष्य है
उसे चाहिए प्यार
चाहिए खुली हवा
लेकिन बंद खिड़कियों से टकराकर
अपना सिर
लहूलुहान गिर पड़ी है वह
चाह रही है वह जीना
लेकिन घुट-घुटकर मरना भी
क्या जीना ?
घर-घर में श्मशान-घाट हैं
घर-घर में फाँसी-घर हैं
घर-घर में दीवारें हैं
दीवारों से टकराकर
गिरती है वह
गिरती है आधी दुनिया
सारी मनुष्यता गिरती है
हम जो ज़िंदा हैं
हम सब अपराधी हैं
हम दंडित हैं।

(1982)

दंगा

: 1 :

आओ भाई बेचू आओ
आओ भाई अशरफ़ आओ
मिल-जुल करके छुरा चलाओ

मालिक रोज़गार देता है
पेट काटकर छुरा मँगाओ
फिर मालिक की दुआ मनाओ
अपना-अपना धरम बचाओ
मिल-जुल करके छुरा चलाओ
आपस में कटकर मर जाओ
आओ भाई तुम भी आओ
तुम भी आओ तुम भी आओ
छुरा चलाओ धरम बचाओ
आओ भाई आओ आओ !

: 2 :

छुरा भोंककर चिल्लाये—
'हर-हर शंकर'
छुरा भोंककर चिल्लाये—
'अल्लाहो-अकबर'

शोर ख़त्म होने पर
जो कुछ बचा रहा
वह था छुरा
और
बहता लोहू ...

: 3 :

इस बार दंगा बहुत बड़ा था
ख़ूब हुई थी
ख़ून की बारिश
अगले साल अच्छी होगी
फ़सल
मतदान की ।

(1978)

भूखी चिड़िया की कहानी

एक थी चिड़िया
चिड़िया भूखी थी
उड़ी दाने की खोज में
दाना था खूँटे के भीतर बंद
चिड़िया बढ़ई से बोली—
बढ़ई भाई, बढ़ई भाई
दाना खूँटे में बंद है
क्या खाऊँ ? क्या पिऊँ ?
क्या लेके जाऊँ परदेस ?

बढ़ई ने खूँटा चीरा
खूँटे से दाना निकला
दाना उड़ा फुर्र
चिड़िया दाने के पीछे उड़ी
दाना उड़कर जा गिरा
राजा के गोदाम में
गोदाम पर संतरी था
चिड़िया संतरी से बोली—
संतरी भाई, संतरी भाई
दाना गोदाम में बंद है
क्या खाऊँ ? क्या पिऊँ ?

क्या लेके जाऊँ परदेस ?

संतरी ने मंत्री को ख़बर दी
मंत्री ने राजा को ख़बर दी
राजा ने सिपहसालार को बुलाया
सिपहसालार ने फ़ैसला करने को
मुंसिफ़ बैठाया
मुंसिफ़ ने पोथे उलटे
मुंसिफ़ ने की जिरह—
भूखी क्यों थी चिड़िया ?
ख़ामख़ाह भूखी थी ही अगर
तो दाने का पीछा क्यों किया
दाना जो अपनी मरज़ी से
आ गिरा राजा के गोदाम में ?
ख़बर फैली कानोंकान
अख़बारों में छपी
चिड़िया बनाम दाने के मुक़दमे की
भूखी थी चिड़िया
इसलिए गुनहगार थी
मारी गयी चिड़िया
जो भूखी थी ।

(1979)

उनका डर

वे डरते हैं
किस चीज़ से डरते हैं वे
तमाम धन-दौलत
गोला-बारूद पुलिस-फ़ौज के बावजूद ?
वे डरते हैं
कि एक दिन
निहत्थे और ग़रीब लोग
उनसे डरना
बंद कर देंगे ।

(1979)

सच्चाई

मेहनत से मिलती है
छिपायी जाती है स्वार्थ से
फिर, मेहनत से मिलती है ।

(1982)

समकालीन

कहीं चीख़ उठी है अभी
कहीं नाच शुरू हुआ है अभी
कहीं बच्चा हुआ है अभी
कहीं फ़ौजें चल पड़ी हैं अभी।

(1981)

आँखें देखकर

ये आँखें हैं तुम्हारी
तकलीफ़ का उमड़ता हुआ समुंदर
इस दुनिया को
जितनी जल्दी हो
बदल देना चाहिए।

(1978)

भेड़िया

: 1 :

पानी पिये
नदी के उस पार या इस पार
आगे-नीचे की ओर
या पीछे और ऊपर
पिये या न पिये
जूठा हो ही जाता है पानी
भेड़ गुनहगार ठहरती है
यक़ीनन
भेड़िया होता है
खून के स्वाद का तर्क ।

: 2 :

शेर जंगल का राजा है
भेड़िया क़ानून-मंत्री
ताक़तवर और कमज़ोर के बीच
दंगल है
जगह-जगह बिखरे पड़े हैं खून के छींटे
और हड्डियाँ
जंगल में मंगल है ।

: 3 :

भेड़िया गुर्राता है
ध्यान से सुनकर
आत्मा की आवाज़
भेड़ को
खा जाता है ।

: 4 :

शिकार पर निकला है भेड़िया
भूगोल के अँधेरे हिस्सों में
भेड़ की खाल ओढ़े
जागते रहो, सोने वालो
भेड़िये से
बच्चों को बचाओ ।

(1980)

समझदारों का गीत

हवा का रुख कैसा है, हम समझते हैं
हम उसे पीठ क्यों दे देते हैं, हम समझते हैं
हम समझते हैं खून का मतलब
पैसे की क़ीमत हम समझते हैं
क्या है पक्ष में विपक्ष में क्या है, हम समझते हैं
हम इतना समझते हैं
कि समझने से डरते हैं और चुप रहते हैं
चुप्पी का मतलब भी हम समझते हैं

बोलते हैं तो सोच-समझकर बोलते हैं हम
हम बोलने की आज़ादी का
मतलब समझते हैं
टटपुंजिया नौकरियों के लिए
आज़ादी बेचने का मतलब हम समझते हैं
मगर हम क्या कर सकते हैं
अगर बेरोज़गारी अन्याय से
तेज़ दर से बढ़ रही हो
हम आज़ादी और बेरोज़गारी दोनों के
ख़तरे समझते हैं
हम खतरों से बाल-बाल बच जाते हैं
हम समझते हैं

हम क्यों बच जाते हैं, यह भी हम समझते हैं

हम ईश्वर से दुखी रहते हैं अगर वह
सिर्फ़ कल्पना नहीं है
हम सरकार से दुखी रहते हैं
कि समझती क्यों नहीं
हम जनता से दुखी रहते हैं
कि भेड़ियाधसान होती है
हम सारी दुनिया के दुख से दुखी रहते हैं
हम समझते हैं
मगर हम कितना दुखी रहते हैं यह भी
हम समझते हैं
यहाँ विरोध ही वाजिब क़दम है
हम समझते हैं
हम क़दम-क़दम पर समझौता करते हैं
हम समझते हैं
हम समझौते के लिए तर्क गढ़ते हैं
हर तर्क को गोल-मटोल भाषा में
पेश करते हैं, हम समझते हैं
हम गोल-मटोल भाषा का तर्क भी
समझते हैं

वैसे हम अपने को किसी से कम
नहीं समझते हैं
हम स्याह को सफ़ेद और
सफ़ेद को स्याह कर सकते हैं
हम चाय की प्यालियों में
तूफ़ान खड़ा कर सकते हैं
करने को तो हम क्रांति भी कर सकते हैं
अगर सरकार कमज़ोर हो
और जनता समझदार
लेकिन हम समझते हैं
कि हम कुछ नहीं कर सकते हैं
हम क्यों नहीं कुछ कर सकते हैं
यह भी हम समझते हैं ।

(1982)

बुआ के लिए

तुम्हारे चेहरे पर उगी
घनी झुर्रियों के पीछे झाँकता हूँ
और तकलीफ़ की सलवटों में बदलते
साल-दर-साल के आईने में
एक कमउम्र लड़की देखता हूँ
जिसकी माँग से सिंदूर पोंछा जा रहा है
हाथों की चूड़ियाँ तोड़ी जा रही हैं
गवना होने से पहले
जिसके सहारे की अकेली लकड़ी टूट गयी है
रो-रोकर थकी
जो अब मूर्च्छित होकर गिर पड़ी है ।

वह सम्मान से जी सकती थी
मगर ज़िंदगी अब उसके लिए
कलंक का धब्बा-भर होगी
वह सुखी हो सकती थी
मगर अब सुख का सपना
देखना भी उसके लिए पाप होगा
वह माँ हो सकती थी
मगर अब मातृत्व
उसके लिए गुनाह होगा

वह मंगल की घड़ियों में
अमंगल होगी
वह विधवा है
सनातन धर्म का एक अभिशाप
ज़िंदा होकर भी जो
मौत की परछाईं की तरह रहेगी ।

यह तुम हो बुआ,
धूल और राख से
शुरू करती हो जीना
कमज़ोरियों को ताक़त में बदलते हुए
फील-पाँव की तरह
घसीटते हुए उम्र को
घूंट-घूंट ज़हर पीकर
तुम हमारे बीच
अमृत बाँटती हो ।

तेल बुकवा लगाती बेना डोलाती
निर्गुन लोरी की तरह सुनाती
स्कूल में देर हो जाने पर
बेचैन हो उठती
पलकें हमारी राहों पर बिछाये
जो हमेशा के लिए
हमारी चेतना के क्षितिज पर फैल गयी हैं
सबसे पहले पकने और
भिनुसारे टपकने वाले
गोपी आम हमें लाकर देती
बाबर के ज़माने के संदूक में
मिठाइयाँ छिपाकर रखती
और खिलाने से पहले
चिरौरी कराती
एक-एक पैसा जोड़कर रखती
और हमारी पढ़ाई और कमीज़ पर
खर्च करती

बुआ, प्यारी बुआ
तुम हमारे लिए माँ हो
और माँ से ज़्यादा भी हो ।

गाँव में किसके घर
आज दाल में नमक पड़ा है, तुम जानती हो
कलकत्ते से कमाकर क्या लाया है मोती
कितने कपड़े कितने साबुन
कोई नया ट्रंक लाया है कि नहीं
तुम जानती हो
किसे बन्नी कम दी गयी
किसे भात और सब्ज़ी के साथ
दही भी मिलना चाहिए
बथुए का साग
तंदुरुस्ती के लिए क्यों अच्छा है
तुम जानती हो
कौन अपनी मेहरी को सताता है
मेहरी की शिकायत पर
कौन तुम्हारे सामने आने में
लजाता है, तुम जानती हो
तुम जानती हो कि कोइलरी जाने वालों
के लिए और घर-भीतर की पंचायतों में
तुम्हारी क्यों ज़रूरत रहती है
तुम जानती हो और सबकी मदद करती हो
जितना कर सकती हो
बुआ, प्यारी बुआ
तुम आत्मा हो
ज़मींदारी और पाले से मारे गये
हमारे गाँव की
हमारे लिए माँ हो तुम
और माँ से ज़्यादा भी हो ।

तुम्हारे बिना तीज-त्यौहार सूने लगते हैं
मंगल के गीत तुम कढाती हो

क ख ग भी नहीं जानती हो
मगर हमें जीने के गुर सिखाती हो
कहती हो—"पता नहीं
तुम नकसल में जाते हो
कि बनारस पढ़ने
जहाँ भी जाओ और रहो
हमारी नाक न कटने देना
और मेरे मरने से पहले
एक बार घर ज़रूर लौटना"
विदा के समय असीसते हुए
फफककर रो पड़ती हो
बुआ, प्यारी बुआ
हमारे लिए तुम माँ हो
और माँ से ज़्यादा भी हो ।

लेकिन बुआ
तुम अब भी छुआछूत क्यों मानती हो ?
पिता के सामंती अभिमान के हमलों से
कवच की तरह
हमारी हिफ़ाज़त करने के बावजूद
रामधनी चमार को नीच क्यों समझती हो
जो ज़िन्दगी-भर हमारे घर हल चलाता रहा
हमेशा ग़रीब रहा
और पिता का ज़ुल्म सहता रहा ?
क्यों ?
आखिर क्यों सबकी बराबरी में
तुम्हें यक़ीन नहीं होता ?
बोलो
चुप मत रहो, बुआ
बहुत आँसू बहा चुकी हो तुम चुपचाप
न हो तो वह लोरी ही
एक बार फिर सुनाओ—
एकमति बहती हुई नदियाँ
मिलकर एक दह बनाती हैं

जहाँ पुरइन लहराती है
खिलता है कमल का फूल
जिस पर भौंरा लुभा जाता है
एक बार फिर सुनाओ
वह जीवन और आकर्षण का
पवित्र, उदासी-भरा गीत
जिसमें मनाही नहीं कोई
जीवन-रतन की तरह लगातार
सुंदर और क़ीमती होता जाता है
गाओ वही निर्बंध प्यार का गीत
बुआ, प्यारी बुआ
हमारे लिए तुम माँ हो
और माँ से ज़्यादा भी हो ।

(1982)

तटस्थ के प्रति

चैन की बाँसुरी बजाइये आप
शहर जलता है और गाइये आप
हैं तटस्थ या कि आप नीरो हैं
असली सूरत ज़रा दिखाइये आप

(1978)

हाथ

रास्ते में उगे हैं काँटे
रास्ते में उगे हैं पहाड़
देह में उगे हैं हाथ
हाथों में उगे हैं औज़ार

(1979)

लोकगीत

झुर-झुर बहे बहार
गमक गेंदा की आवे !
दुख की तार-तार
चूनर पहने
लौट गयी गोरी
नइहर रहने
चंदन लगे किवाड़
पिया की याद सतावे ।
भाई चुप भाभी
देती ताने
अब तो माई-बाप
न पहचानें
बचपन की मनुहार
नयन से नीर बहावे ।
परदेसी ने की जो
अजब ठगी
हुई धूल-माटी की
यह जिनगी
जोबन होवे भार
कि सुख सपना हो जावे ।

(1982)

सात सुरों में पुकारता है प्यार

माँ, मैं जोगी के साथ जाऊँगी

जोगी सिरीस तले
मुझे मिला

सिर्फ़ एक बाँसुरी थी उसके हाथ में
आँखों में आकाश का सपना
पैरों में धूल और घाव

गाँव-गाँव वन-वन
भटकता है जोगी
जैसे ढूंढ रहा हो खोया हुआ प्यार
भूली-बिसरी सुधियों और
नामों को बाँसुरी पर टेरता

जोगी देखते ही भा गया मुझे
माँ, मैं जोगी के साथ जाऊँगी

नहीं उसका कोई ठौर-ठिकाना
नहीं जात-पाँत
दर्द का एक राग

गाँवों और जंगलों में
गुंजाता भटकता है जोगी
कौन-सा दर्द है उसे माँ
क्या धरती पर उसे
कभी प्यार नहीं मिला ?
माँ, मैं जोगी के साथ जाऊँगी

ससुराल वाले आयेंगे
लिये डोली-कहार बाजा-गाजा
बेसक़ीमती कपड़ों में भरे
दूल्हा राजा
हाथी-घोड़ा शान-शौक़त
तुम संकोच मत करना माँ
अगर वे गुस्सा हों मुझे न पाकर
तुमने बहुत सहा है
तुमने जाना है किस तरह
स्त्री का कलेजा पत्थर हो जाता है
स्त्री पत्थर हो जाती है
महल अटारी में
सजाने के लायक़
मैं एक हाड़-मांस की
स्त्री
नहीं हो पाऊँगी पत्थर
न ही माल-असबाब
तुम डोली सजा देना
उसमें काठ की पुतली रख देना
उसे चूनर भी ओढ़ा देना
और उनसे कहना—
लो, यह रही तुम्हारी दुल्हन

मैं तो जोगी के साथ जाऊँगी माँ
सुनो, वह फिर से बाँसुरी
बजा रहा है
सात सुरों में पुकार रहा है प्यार

भला मैं कैसे
मना कर सकती हूँ उसे ?

(1981)
(श्री रामजी राय से एक लोकगीत सुनकर)

जन्म और कर्म

सब-के-सब
ब्रह्म से निकले

मुंह से ब्राह्मण
बांहों से क्षत्रिय
वैश्य जांघों से
पैरों से शूद्र निकले

अभेद से भेद की
शुरुआत हुई
पवित्र से छुआछूत की

मुंह बांहों से लड़े
बांहें जांघों से
जांघें पैरों से
सब-के-सब आपस में लड़े
टुकड़े-टुकड़े हुए
समाज के अंग

फिर मुंह बांहों से मिलकर
जगत को भकोसते और कोसते रहे

जाँघें और पैर हाथों से
मेहनत कर
जगत को पालते-पोसते रहे।

(1982)

कुर्सीनामा

: 1 :

जब तक वह ज़मीन पर था
कुर्सी बुरी थी
जा बैठा जब कुर्सी पर वह
ज़मीन बुरी हो गयी।

: 2 :

उसकी नज़र कुर्सी पर लगी थी
कुर्सी लग गयी थी
उसकी नज़र को

उसको नज़रबंद करती है कुर्सी
जो औरों को
नज़रबंद करता है।

: 3 :

महज़ ढाँचा नहीं है
लोहे या काठ का
क़द है कुर्सी
कुर्सी के मुताबिक़ वह

बड़ा है या छोटा है
स्वाधीन है या अधीन है
खुश है या ग़मगीन है
कुर्सी में जज्ब होता जाता है
एक अदद आदमी।

: 4 :

फ़ाइलें दबी रहती हैं
न्याय टाला जाता है
भूखों तक रोटी नहीं पहुँच पाती
न ही मरीजों तक दवा
जिसने कोई जुर्म नहीं किया
उसे फाँसी दे दी जाती है
इस बीच
कुर्सी ही है
जो घूस और प्रजातंत्र का
हिसाब रखती है।

: 5 :

कुर्सी खतरे में है तो प्रजातंत्र खतरे में है
कुर्सी खतरे में है तो देश खतरे में है
कुर्सी खतरे में है तो दुनिया खतरे में है
कुर्सी न बचे
तो भाड़ में जायें प्रजातंत्र
देश और दुनिया।

: 6 :

खून के समुंदर पर सिक्के रखे हैं
सिक्कों पर रखी है कुर्सी
कुर्सी पर रखा हुआ
तानाशाह
एक बार फिर
क़त्ले-आम का आदेश देता है।

: 7 :

अविचल रहती है कुर्सी
माँगों और शिकायतों के संसार में
आहों और आँसुओं के
संसार में अविचल रहती है कुर्सी
पायों में आग
लगने
तक।

: 8 :

मदहोश लुढ़ककर गिरता है वह
नाली में आँख खुलती है
जब नशे की तरह
कुर्सी उतर जाती है।

: 9 :

कुर्सी की महिमा
बखानने का
यह एक थोथा प्रयास है
चिपकने वालों से पूछिये
कुर्सी भूगोल है
कुर्सी इतिहास है।

(1980)

सोहनी का गीत

मेड़ पर
राजा के घोड़े की टाप
बिवाई-फटे पैर
हम निकालतीं खरपतवार
ताकि पौधों को रस मिले
फूलें-फलें पौधे
खेतों में सोना बरसे
हमारे फटे आँचल से
रास्ते में गिर जाता है
मजूरी का अनाज

राजा के हाथ में चाबुक
बिवाई-फटे पैर
हम निकालतीं खरपतवार
ताकि पौधों को रस मिले
फूलें-फलें पौधे
खेतों में सोना बरसे
जीवन सुखी हो
हमारी पीठ पर चाबुक के निशान
हमारे गीतों में राजा के घोड़े की टाप

चाबुक जल जाये
भसम हो जाये
राजा का घोड़ा
हमारे गीतों में
पौधों की सुआपंखी हरियाली हो
उगाया करें हम
मिट्टी से सोना
हमें दूसरों के आगे
आँचल पसारना न पड़े कभी।

(1981)

फूल

फूल हैं गोया मिट्टी के दिल हैं
धड़कते हुए
बादलों के ग़लीचों पे रंगीन बच्चे
मचलते हुए
प्यार के काँपते होठ हैं
मौत पर खिलखिलाती हुई चम्पई
ज़िंदगी
जो कभी मात खाये नहीं
और ख़ुशबू हैं
जिसको कोई बाँध पाये नहीं

ख़ूबसूरत हैं इतने
कि बरबस ही जीने की इच्छा जगा दें
कि दुनिया को
और जीने लायक़ बनाने की
इच्छा जगा दें ।

(1979)

कला कला के लिए

कला कला के लिए हो
जीवन को ख़ूबसूरत बनाने के लिए
न हो
रोटी रोटी के लिए हो
खाने के लिए न हो

मज़दूर मेहनत करने के लिए हों
सिर्फ़ मेहनत
पूंजीपति हों मेहनत की जमा-पूंजी के
मालिक बन जाने के लिए
यानी, जो हो जैसा हो वैसा ही रहे
कोई परिवर्तन न हो
मालिक हों
ग़ुलाम हों
ग़ुलाम बनाने के लिए युद्ध हो
युद्ध के लिए फ़ौज हो
फ़ौज के लिए फिर युद्ध हो

फ़िलहाल, कला शुद्ध बनी रहे
और शुद्ध कला के
पावन प्रभामंडल में

बने रहें जल्लाद
आदमी को
फाँसी पर चढ़ाने के लिए ।

(1981)

चिट्ठी

प्रिय भाई,
एक अरसे बाद चिट्ठी लिख रहा हूँ
कृपया इसे कविता समझना

सुनता हूँ इधर कविता आ गयी है
केन्द्र में जैसे इंदिरा गांधी

सड़कों से वापस आ गयी है
हाकिमों के हरे-भरे लानों में

खुला चरागाह है
बारीक़ इशारों के कँटीले तारों से
घिरा
घास है ख़ूब
भावों की लहलहाती
कला की हरियाली है
चरते हैं मुक्तभाव से
सौंदर्यशास्त्र के मालिक
चरैवेति

कुछ लोग बिहार में मारे गये हैं

कुछ लोग बंगाल में
दिल्ली में गिरफ़्तार हुए हैं कुछ लोग
कुछ लोग मद्रास में
पुलिस-फ़ौज चुस्त है
व्यवस्था दुरुस्त है
इसलिए राजनीति के बारे में मत सोचना
वरना कविता का कलेवर
विचार के भार से
चरमरा जायेगा
जानते ही हो कितनी नाज़ुक होती है
ज़ुकाम हो तो उसके जिगर में
दर्द हो जाता है
जिगर का दर्द ही उसकी
प्रामाणिक अनुभूति है
अनुभूति ही यथार्थ
सो हे भाई,
जिगरी यथार्थ पर ज़रा ध्यान देना
देखना सब ठीक हो जायेगा
सरकार चीनी के साथ
कविता भी कंट्रोल रेट पर
मुहैया करेगी
कविता का हर पद
शहद के छत्ते-सा होगा
रस से लबालब भरा
मीठा और
घास-सा चिकना और मुलायम

सब ठीक हो जायेगा
ग़रीबी करुण रस का
सुख देगी
हत्या परमानंद रस का
रस ही रस होगा
कविता में चरागाह होगा
चरागाह में होंगे

जुगालियाँ करते
सौंदर्यशास्त्र के मालिक
सौम्य शांत ! चरैवेति
कोई चिंता मत करना
ज्यादा समझना
हे प्रिय भाई !

(1981)

(श्री महेश्वर को लिखे गये पत्र का संशोधित रूप)

समय का पहिया

समय का पहिया चले रे साथी !
समय का पहिया चले।
फ़ौलादी घोड़ों की गति से आग बर्फ़ में जले रे साथी !
समय का पहिया चले।
रात और दिन पल-पल छिन-छिन आगे बढ़ता जाये
तोड़ पुराना नये सिरे से सब-कुछ गढ़ता जाये,
पर्वत-पर्वत धारा फूटे लोहा मोम-सा गले रे साथी !
समय का पहिया चले।
धरती डोले, सूरज डोले, डोलें चाँद सितारे
डोलें गढ़ औ' क़िले दमन के, डोलें शासक सारे,
तूफ़ानों के बीच अमर जीवन का अंकुर पले रे साथी !
समय का पहिया चले।
उठा आदमी जब जंगल में अपना सीना ताने
रफ़्तारों को मुट्ठी में कर पहिया लगा घुमाने,
मेहनत के हाथों से आज़ादी की सड़कें ढलें रे साथी !
समय का पहिया चले।

(1979)

वतन का गीत

हमारे वतन की नयी ज़िंदगी हो
नयी ज़िंदगी इक मुकम्मिल ख़ुशी हो,
नया हो गुलिस्ताँ नयी बुलबुलें हों
मुहब्बत की कोई नयी रागिनी हो,
न हो कोई राजा न हो रंक कोई
सभी हों बराबर सभी आदमी हों,
न ही हथकड़ी कोई फ़सलों को डाले
हमारे दिलों की न सौदागरी हो,
ज़ुबानों पे पाबंदियाँ हों न कोई
निगाहों में अपनी नयी रोशनी हो,
न अश्कों से नम हो किसी का भी दामन
न ही कोई भी क़ायदा हिटलरी हो,
सभी होठ आज़ाद हों मयक़दे में
कि गंगो-जमन जैसी दरियादिली हो,
नये फ़ैसले हों नयी कोशिशें हों
नयी मंज़िलों की कशिश भी नयी हो।

(1982)

बुआ के लिए

होना आग का

कविता

कविता, युग की नब्ज़ धरो !

अफ़रीका, लातिन अमेरिका
उत्पीड़ित हर अंग एशिया
आदमख़ोरों की निगाह में
खंजर-सी उतरो !

जन-मन के विशाल सागर में
फैल प्रबल झंझा के स्वर में
चरण-चरण विप्लव की गति दो !
लय-लय प्रलय भरो !

श्रम की भट्ठी में गल-गलकर
जग के मुक्ति-चित्र में ढलकर
बन स्वच्छंद सर्वहारा के
ध्वज के संग लहरो !
शोषण छल-छंदों के गढ़ पर
टूट पड़ो नफ़रत सुलगाकर
क्रुद्ध अमन के राग, युद्ध के
पन्नों से गुज़रो !

उलटे अर्थ विधान तोड़ दो
शब्दों से बारूद जोड़ दो
अक्षर-अक्षर पंक्ति-पंक्ति को
छापामार करो !

(1975)

सोचो तो

बिलकुल मामूली चीज़ें हैं
आग और पानी
मगर सोचो तो कितना अजीब होता है
होना
आग और पानी का
जो विरोधी हैं
मगर मिलकर पहियों को गति देती हैं
वैसे, सोचो तो अँधेरे में चमकते
ये हज़ारों हाथ हैं
इतिहास के पहियों को
रोटी-रचना और मुक्ति के
पड़ावों की ओर बढ़ाते हुए
इतिहास की किताबों में
इनका ज़िक्र भी न होना
सोचो तो कितना अजीब है
सोचो तो मामूली तौर पर
जो अनाज उगाते हैं
उन्हें दो जून अन्न ज़रूर मिलना चाहिए
उनके पास कपड़े ज़रूर होने चाहिए
जो उन्हें बुनते हैं
और उन्हें प्यार मिलना ही चाहिए

जो प्यार करते हैं
मगर सोचो तो
यह भी कितना अजीब है
कि उगाने वाले भूखों रहते हैं
और अनाज पचा जाते हैं
चूहे और बिस्तरों पर
पड़े रहने वाले लोग
बुनकर फटे चीथड़ों में रहते हैं
और अच्छे-से-अच्छे कपड़े
प्लास्टिक की मूर्तियाँ पहने होती हैं
ग़रीबी में प्यार भी नफ़रत करता है
और पैसा नफ़रत को भी
प्यार में बदल देता है
सोचो तो इस तरह कितनी अजीब और
कभी-कभी एकदम उलटी
होती हैं चीज़ें
जिन्हें हम मामूली समझकर चलते हैं
वैसे, सोचो तो सोचने को
बहुत कुछ है मगर सोचो तो
यह भी कितना अजीब है
कि हम सोच सकते हैं
मसलन हम सोच सकते हैं
कि फ़सल ज़मींदारों के बिना भी
उग सकती है
जैसे परमाणु अस्त्रों के बिना भी
क़ायम हो सकती है शांति
जो कल-कारखाने अपने हाथों चलाते हैं
वे उनके मालिक भी हो सकते हैं
पानी जोंकों के बिना भी
बहता रह सकता है
और आग झोंपड़े जलाने के लिए नहीं
बल्कि ठंड से काँपते लोगों को
बचाने के काम आ सकती है
सोचो तो सिर्फ़ सोचने से

कुछ होने-जाने का नहीं
जबकि करने को पड़े हैं
उलटी चीज़ों को उलट देने जैसे ज़रूरी
और ढेर सारे काम
वैसे, सोचो तो यह भी कितना अजीब है
कि बिना सोचे भी
कुछ होने-जाने का नहीं
जबकि
होते हो
इसलिए सोचते हो।

(1981)

क़ानून

लोहे के पैरों में भारी बूट
कंधे से लटकती बंदूक
क़ानून अपना रास्ता पकड़ेगा
हथकड़ियाँ डालकर हाथों में
तमाम ताक़त से उन्हें
जेलों की ओर खींचता हुआ
गुज़रेगा विचार और श्रम के बीच से
श्रम से फल को अलग करता
रखता हुआ चीज़ों को
पहले से तय की हुई
जगहों पर
मसलन अपराधी को
न्यायाधीश की, ग़लत को सही की
और पूंजी के दलाल को
शासक की जगह पर
रखता हुआ
चलेगा
मज़दूरों पर गोली की रफ़्तार से
भुखमरी की रफ़्तार से किसानों पर
विरोध की ज़ुबान पर
चाक़ू की तरह चलेगा

व्याख्या नहीं देगा
बहते हुए ख़ून की
क़ानून व्याख्या से परे कहा जायेगा
देखते-देखते
वह हमारी निगाहों और सपनों में
ख़ौफ़ बनकर समा जायेगा
देश के नाम पर
जनता को गिरफ़्तार करेगा
जनता के नाम पर
बेच देगा देश
सुरक्षा के नाम पर
असुरक्षित करेगा
अगर कभी वह आधी रात को
आपका दरवाज़ा खटखटायेगा
तो फिर समझिये कि आपका
पता नहीं चल पायेगा
ख़बरों में इसे मुठभेड़ कहा जायेगा

पैदा होकर मिल्कियत की कोख से
बहसा जायेगा
संसद में और कचहरियों में
झूठ की सुनहली पालिश से
चमकाकर
तब तक लोहे के पैरों
चलाया जायेगा क़ानून
जब तक तमाम ताक़त से
तोड़ा नहीं जायेगा।

(1980)

ज़मींदार सोचता है

अब सिर उठाकर चलता है
मूंछ पर ताव देता है तिलकू
बँसखट झोंपड़ी से बाहर खींच लाता है
ठाकुर-ब्राह्मन के सामने भी
उस पर बैठता है
गाली सुनकर भौंह टेढ़ी करता है
पिटने पर डंडा थाम लेता है
और रोता नहीं है
शरारती हो रहा है तिलकू

कपड़े साबुन से साफ़ करता है
फटने पर सिलवा लेता है
बालों में तेल लगाता है
अपने बेटे के लिए पेट काटकर
क़लम-काग़ज़ जुटाता है
उसे हाकिम बनाने के ख्वाब देखता है
अपनी ज़मीन होने के ख्वाब देखता है
हालाँकि ख्वाबों में भी
उसे डंडे पड़ते हैं
मगर उन्हें देखना नहीं छोड़ता
सबेरे हल ले जाने को कहो तो

बीमारी का बहाना बनाता है
चमार कहो तो तिलमिला उठता है
पूछता है—
जब हम गेहूँ काट-दाँवकर लाते हैं
तो अछूत नहीं होते
मगर जब आप उसकी रोटी चाभते हैं
तो अछूत हो जाते हैं
यह कहाँ का धरम है ?
और तो और
कहता है कि उसके भी दिल है
उसे भी दर्द होता है
वह भी आदमी है
शरारत की हद से गुज़र रहा है तिलकू
कर्ज़ उतारने के लिए
कोइलरी या कलकत्ता भाग जाना चाहता है
बेगारी खटना नहीं चाहता
कोल्हू के बैल की तरह
कब तक जियें ? कब तक बरदाश्त करें ?
ज़ाहिर है
सात जनम से सेवा-टहल करने वाला
और कभी चूँ नहीं करने वाला
तिलकू अब धर्म और समाज के लिए
खतरा होता जा रहा है
अगर जल्दी से उसके होश
ठिकाने न लगाये गये
तो कल तक प्रलय भी मचा सकता है।

(1979)

उसको फाँसी दे दो

वह कहता है उसको रोटी-कपड़ा चाहिए
बस इतना ही नहीं, उसे न्याय भी चाहिए
इस पर से उसको सचमुच आज़ादी चाहिए
उसको फाँसी दे दो।

वह कहता है उसे हमेशा काम चाहिए
सिर्फ़ काम ही नहीं, काम का फल भी चाहिए
काम और फल पर बेरोक दखल भी चाहिए
उसको फाँसी दे दो।

वह कहता है कोरा भाषण नहीं चाहिए
झूठे वादे हिंसक शासन नहीं चाहिए
भूखे-नंगे लोगों की जलती छाती पर
नक़ली जनतंत्री सिंहासन नहीं चाहिए
उसको फाँसी दे दो।

वह कहता है अब वह सबके साथ चलेगा
वह शोषण पर टिकी व्यवस्था को बदलेगा
किसी विदेशी ताक़त से वह मिला हुआ है
उसको इस ग़द्दारी का फल तुरत मिलेगा

आओ देशभक्त जल्लादो !
पूँजी के विश्वस्त पियादो !
उसको फाँसी दे दो।

(1978)
(किसान क्रांतिकारियों को फाँसी दिये जाने पर)

मेहनतकशों का गीत

किसकी मेहनत और मशक्कत
किसके मीठे-मीठे फल हैं ?
अपनी मेहनत और मशक्कत
उनके मीठे-मीठे फल हैं
किसने ईंट-ईंट जोड़ी है
किसके आलीशान महल हैं ?
हमने ईंट-ईंट जोड़ी है
उनके आलीशान महल हैं
आज़ादी हमने पैदा की
क्यों ग़ुलाम हम, क्यों निर्बल हैं ?
धन-दौलत का मालिक कैसे
हुआ निकम्मों का यह दल है ?
कैसी है यह दुनिया उनकी
कैसा यह उनका विधान है ?
उलटी है यह दुनिया उनकी
उलटा ही उनका विधान है
हम मेहनत करने वालों के
ही ये सारे मीठे फल हैं
ले लेंगे हम दुनिया सारी
जान गये एका में बल है।

(1982)

हे प्रभु !

हम तो कुटिल खलकामी हैं, हे प्रभु !
हम हिंदुस्तानी हैं, हे प्रभु !
हमारी घड़ियाँ और रेलें
ठीक समय पर नहीं चलतीं
हमारे नेता कभी सच के किनारे
नहीं जाते
हमारे खाने-पीने के सामानों से लेकर
दिलों तक में मिलावट हो जाती है
हम तो कुटिल खलकामी हैं, हे प्रभु !
आप हमारे स्वामी हैं, हे प्रभु !
स्वामी हैं आप हमारे कच्चे माल के
हमारी मेहनत और दिमाग़ के,
आप स्वामी हैं
आप पूंजी हैं लाभ हैं लूट हैं खसोट हैं
आप धौंस हैं धमकी हैं चोट हैं
आप शांति के समाजवादी कपोत हैं
आप युद्ध के स्रोत हैं
आप नाना रूपधारी हैं, हे प्रभु !
आप महाबलशाली हैं, हे प्रभु !
हम आपकी कृपा से आज़ाद हैं
हम आपकी कृपा से बेबुनियाद हैं

हम ग़रीबी और ग़ैर-बराबरी को
भाग्य समझते हैं
और ग़ुलामी को धर्म
क्योंकि हिंदुस्तानी हैं
ज़ुल्म जारी रहता है
मगर हम विद्रोह नहीं करते
क्योंकि हिंदुस्तानी हैं
हम तो कुटिल खलकामी हैं, हे प्रभु !
आप हमारे स्वामी हैं, हे प्रभु !
अंत में एक हार्दिक प्रार्थना है, हे प्रभु !
हमारे लिए कुछ ठीक समय से
चलने वाली घड़ियाँ
कुछ नये फ़ैशन के जीन्स और विचार
स्मगल करिये, हे प्रभु !
और हाँ,
अगर पड़ोसियों से युद्ध करना हो
तो कुछ टैंक और बम भी, हे प्रभु !

(1982)

नहीं

नहीं हिंस्र पंजे औ' ख़ूनी जबड़े
आदमख़ोरों के घेरे में नहीं
नहीं पत्थरों के पैरों पर नत शिर
ग़लत विचारों के फेरे में नहीं।
नहीं सुनहली ज़ंजीरों को स्वीकृति
सम्राटों का महिमामंडल नहीं
ख़ुशी और योजना काग़ज़ी नहीं
अत्याचारी का छल औ' बल नहीं।
नहीं देह की बिक्री श्रम की नहीं
समझौता औ' आत्मसमर्पण नहीं
नहीं बिना गति नहीं मुक्ति भी नहीं
नहीं-नहीं तो जीने का प्रण नहीं।

(1982)

अधिनायक वंदना

जन गण मन अधिनायक जय हे !

जय हे हरित क्रांति निर्माता
जय गेहूँ हथियार प्रदाता
जय हे भारत भाग्य विधाता
अंग्रेज़ी के गायक जय हे ! जन...

जय समाजवादी रँग वाली
जय हे शांतिसंधि विकराली
जय हे टैंक महाबलशाली
प्रभुता के परिचायक जय हे ! जन...

जय हे ज़मींदार पूँजीपति
जय दलाल शोषण में सन्मति
जय हे लोकतंत्र की दुर्गति
भ्रष्टाचार विधायक जय हे ! जन...

जय पाखंड और बर्बरता
जय तानाशाही सुंदरता
जय हे दमन भूख निर्भरता
सकल अमंगलदायक जय हे ! जन...

(1982)

फ़िलिस्तीन

कहाँ जाते हो जनरल ?
नफ़रत के तमग़े चमकाते
मौत की घंटियाँ बजाते
शहरों पर आग बरसाते
हर आदमी को गोली से उड़ाते
बच्चों के ख़ून में नहाते
मौत के अमेरिकी सौदागरों के
ज़रख़रीद जनरल !
कहाँ जाते हो ?

किसे खोजते हो जलते बेरुत के
खँडहरों में ?
किसे नेस्तनाबूद करने सीने में बारूद
बाँहों में लोहा भरे फिरते हो ?
आगे और आगे और आगे
कहाँ जाते हो दलदल में धँसते
डर से काँपते
मुँह से फेंकते फेन ?

फ़िलिस्तीन तो बहुत पीछे छूट गया है
जेरुशलम में, जहाँ से तुम चले थे

फ़िलिस्तीन तो बहुत दूर है
कम्पूचिया के छापामार सैनिकों के
दिल में, जहाँ तुम कभी
पहुँच नहीं सकते
फ़िलिस्तीन है और नहीं है
इसलिए तुम्हारी मार से बाहर है
फ़िलिस्तीन बहुत पीछे है
और बहुत आगे
इसलिए तुम्हारी मार से बाहर है
फ़िलिस्तीन एक समूची ज़मीन है
और ज़मीन से मुकम्मिल प्यार
इसलिए तुम्हारी मार से बाहर है
फ़िलिस्तीन आज़ादी का ज़रूरी भविष्य है
इसलिए तुम्हारी मार से बाहर है
जनरल !
फ़िलिस्तीन लोहू और इस्पात से
फूटता हुआ गुलाब है
कभी न मुरझाने वाला गुलाब
जो अख़ीर में
उगेगा
तुम्हारी क़ब्र पर।

(1982)

एलान

फावड़ा उठाते हैं हम तो
मिट्टी सोना बन जाती है
हम छेनी और हथौड़े से
कुछ ऐसा जादू करते हैं
पानी बिजली हो जाता है
बिजली से हवा-रोशनी
औ' दूरी पर क़ाबू करते हैं
हमने औज़ार उठाये तो
इंसान उठा
झुक गये पहाड़
हमारे क़दमों के आगे
हमने आज़ादी की बुनियाद रखी
हम चाहें तो बंदूक भी उठा सकते हैं
बंदूक कि जो है
एक और औज़ार
मगर जिससे तुमने
आज़ादी छीनी है सबकी

हम नालिश नहीं
फ़ैसला करते हैं।

(1980)

आचार्य की विजय-यात्रा

हर ओर ब्रह्म-विद्या के ध्वज लहराते थे
आचार्य विजय पथ पर बढ़ते ही जाते थे
बढ़ती जाती थी शिष्य-मंडली भी प्रतिदिन
राजा-रानी भी अब तो शीश नवाते थे।
'है सत्य एक वह है सत्‌चित आनंद ब्रह्म
वह है अभेद आत्मा फैला सचराचर में
मिथ्या है यह जग भेदभाव सब मिथ्या है
मिथ्या है दुख मिथ्या इच्छा तन नश्वर में।'

दुंदुभी बजी 'संन्यास वरो हे विद्वज्जन
आओ, सब मोह जगत के नातों को छोड़ो
क्या भाई-बहन पिता-माता राजा व प्रजा
ये भवबंधन के रूप इन्हें निर्भय तोड़ो।'
आचार्य भिक्षुओं से विवाद में जीत गये
उनके तर्कों के सारे तरकश रीत गये
अब नये पड़ावों पर ध्वज को फहराना था
उपहार लगे मिलने दुर्दिन भी बीत गये।

बस, इन्हीं विजय की घड़ियों में इन राहों से
वह गुजर रहे थे शिष्य-मंडली साथ लिये

थी बीच-बीच में बहस ज़ोर की छिड़ जाती
'यह सत्ता है अभेद तो किसने भेद किये ?'

तब तक आगे से आता एक शूद्र दीखा
आचार्यप्रवर की ओर बढ़ा वह आता था
क्या करें ? राह छोड़ें या वह हट जायेगा ?
संकट का क्षण असमंजस में गहराता था।

वह अब शरीर से टकराने ही वाला था
जब गुरुवर का गुस्सा हद से बाहर आया
'छूकर यों तन संन्यासी का रे नीच शूद्र !
युग-युग की महिमा तू खंडित करने आया ?'
'तन तो भ्रम है भगवन्, सत्ता में भेद नहीं,'
बोला तब शूद्र विनम्र भाव से शीश नवा
आचार्यप्रवर पर क्रोध और भी चढ़ बैठा
मानो चिनगारी को हो दे दी गयी हवा
'परमार्थ और व्यवहार सत्य दो होते हैं'
'लेकिन तब सत्य भेदमय ही कहलायेगा'
'तू नास्तिक है शास्त्रार्थ कर रहा है मुझसे
तेरा शिर जल्दी ही कटकर गिर जायेगा'
शिर कटकर गिरा बढ़े आचार्य और आगे
प्रज्ञा के विजयी पथ पर सभी मोह त्यागे
हो निर्विकार निर्भय, जब मदोन्मत्त हाथी
पीछे से आते देख ज़ोर से वह भागे।
थी शिष्य-मंडली हतप्रभ यह कैसी लीला !
ये निर्विकार गुरु भाग रहे किसके भय से ?
'भगवन्, यह तो हाथी है भ्रम का एक रूप
मत मोह करें तन का, न हटें पथ चिन्मय से।'
आचार्य शिष्यगण पर भी अब तो क्रुद्ध हुए
स्वर उनके मानो कंठ-मार्ग में रुद्ध हुए
वह हाँफ रहे थे और भागते जाते थे
लगता था माया के सब तत्व विरुद्ध हुए।
चढ़ गये पेड़ पर किसी तरह आचार्यप्रवर
मन-ही-मन बोले 'जान बची लाखों पाये'

कुछ देर तलक हाथी था नीचे खड़ा रहा
जब लौट गया तो कंपित तन नीचे आये।
तब से आचार्यप्रवर जिस पथ पर बढ़ते थे
पीछे हाथी औ' शूद्र सामने पाते थे
व्यवहार सत्य के दोनों रूप घेर उनको
परमार्थ सत्य का भेद खोलते जाते थे।

(1982)

दुःस्वप्न

अँधेरी रातों में टूटती रहती है
उबलती काली नदी
दलदल में धँसा हुआ साँप
दिन को पिंडलियों में काट गया है
सिकुड़ गया है शहर
कर्फ़्यू और ठंड
की मार से
भूख की टूटी हुई उम्मीद
फ़ुटपाथ पर सो रही है
बरसती हैं रोटियाँ
युद्धरत गिद्धों के ख़ूनी पंजों में
रोटियाँ, विधान के सड़े सुनहले दस्तावेज़
मृत ईश्वर
बंदूकें
थूथन से माइक बाँध भूँकते हैं कुत्ते
इस अंदाज़ में
कि आँसू बहाने से
क़ाबू पा लिया जायेगा
बढ़ते हुए अकाल पर

अरसे से पीछा करती हुई

परछाइयाँ एकदम मेरे क़रीब
आ चुकी हैं
बेतहाशा लहूलुहान भागने के
बावजूद नहीं मिलता
सड़क की ओर
खुलने वाला दरवाज़ा
सिर से टकराती छतें हैं
झरती बर्फ़
दमघोट सुरंगें
एक के बाद एक
खुलती हुई।
टूटती है नदी
कभी न आने वाले राम के इंतज़ार में
पथरा गयी हैं बसंतागम से पहले
दूसरी मंज़िल पर
क़तार से गले तक
ईंटों में चिनी हुई अहल्याएं
अचानक मकान धमाकों से उलटते हैं
उड़ती हैं बाँहें कंधों से
उखड़कर
लुढ़क रहे हैं सम्राट, सेनापति
हिजड़े, वेश्याएँ
जाने कहाँ से
उग आये हैं मुट्ठियों में डाइनामाइट
हवा में इस्पाती आदेश फैलता है —
'बाहर निकलना जुर्म है
देखते ही गोली मार दी जायेगी'
अलग-थलग कमरों में गिरफ़्तार
ज़िंदगी पर
क़त्ल चल रहा है
शहर की लाश पर ढल रहा है
कोहरे का कफ़न।
नदी टूटती है
भग्नप्राय पुल के बायें

ठहरा पड़ा है आंदोलित जुलूस
और दायें
संगीनों के साये में
साया हो रहा है
नागनाथ और साँपनाथ के
बीच चुनाव
विरोधी आवाज़ों का एक बेसिलसिला
उलझा हुआ संसार
आहिस्ता-आहिस्ता
खो रहा है।

(1973)

हुआ यह है

पिता के लिपे-पुते आँगन से
दालमंडी के सूखे कमरों तक
रिश्तों की पर्त-दर-पर्त
घुल चुकी है बाज़ार की स्याह रोशनी
एक समूची होनहार पीढ़ी
बेकारी, अफ़ीम और पागलपन के
हवाले कर दी गयी है
हुआ यह है कि सिर्फ़ नफ़रत
करने के क़ाबिल रह गये हैं हम
पड़ोस का आदमी
कब मुख़बिर में बदल जाये
कहा नहीं जा सकता
गिरीश फ़लसफ़े के मूड में कहता है—
'भीख माँगने से बेहतर है
पागल हो जाना
और उससे बेहतर है यार,
ख़ुदकुशी'
यों सारा-का-सारा देश
भीख माँगने और ख़ुदकुशी करने
के बीच तंग गली से गुज़र रहा है
मक्कार बाँटते हैं प्यार का

इश्तहार
अत्याचारी न्याय का प्रमाणपत्र
संसद-भवन और बूचड़ख़ाने में
समान सम्मान से घूमती है
जादू की छड़ी
जो हर क़ानून से बड़ी है
ज्ञान की मंडियाँ
चलाते हैं क़ातिल
दलाल और रंडियाँ
खेतों और मशीनों में ढलते
रक्त की जितनी भारी लूट है
उतनी ही बुलंद मर्मरी और रोशन हैं
मंदिरों की मीनारें
काला बाज़ार की नींव पर उगे
फूले-फले ईश्वर के हक़ में
इंकमटैक्स में उतनी ही भारी छूट है
जिन्हें हिरासत में होना चाहिए
उनका इशारा संविधान है
और सीधे-सादे लोग
खुली सड़कों पर क़ैद हैं
गलती हो हवा
अथवा लू चलती हो
मौसम पर तर्क नहीं करते
वे ख़ामोशी से मरते हैं
और हम हैं कि उँगली उठाने तक में डरते हैं
हुआ यह है
कि सिर्फ़ नफ़रत करने के क़ाबिल
रह गये हैं हम।

(1973)

सुनो भाई साधो !

माया महाठगिनि हम जानी,
पुलिस फ़ौज के बल पर राजे बोले मधुरी बानी
यह कठपुतली कौन नचावे पंडित भेद न पावें,
सात समुंदर पार बसें पिय डोर महीन घुमावें,
रूबल के संग रास रचावे डालर हाथ बिकानी,
जन-मन को बाँधे भरमावे जीवन मरन बनावे,
अजगर को रस अमृत चखावे जंगल राज चलावे,
बंधन करे करम के जग को अकरम मुक्त करानी,
बिड़ला घर शुभ-लाभ बने मँहगू घर ख़ून-पसीना,
कहत कबीर सुनो भाई साधो जब मानुष ने चीन्हा,
लिया लुआठा हाथ भगी तब कंचनमृग की रानी।

(1977)

(विद्रोही संत कवि से क्षमा-याचना सहित)

बूढ़े घंटाघर के पास

जो बूढ़े घंटाघर के पास महल है
वह तेरा कारागार रहा है, लोगो !
वह नींव कि जिसमें ख़ून चीख़ता तेरा
ऊँची छत तेरे कंधों टिकी हुई है
तेरी हथेलियों के ये दरवाज़े हैं
तेरी आँखों से खिड़की कटी हुई है
तेरा हथियार तुम्हारे ही हाथों से
तुमको सदियों से मार रहा है, लोगो !
बेघर मेहनत के कितने रतन छिपाकर
है काला नाग दे रहा उसमें पहरा
कितने सपनों की कोमलता को डसकर
उसमें पलता क़ातिल का स्वप्न सुनहरा
लेकिन उसकी दीवारें सील चुकी हैं
वह साँस-साँस अब हार रहा है, लोगो !
टूटे घुटनों का दर्द बन गया आँधी
अब क़ैदमहल की नींव तोड़ने उठता
जो मुड़े दबावों से थे बाज़ू-कंधे
उनका हुजूम इतिहास मोड़ने उठता
अब धुआँ दे रही झोंपड़ियों के मन से
विप्लव का कंठ पुकार रहा है, लोगो !

(1969)

कलकत्ता-1971

शहर कलकत्ते में शांति आयी
एक था लड़का
बेकार बिना डर का, शहर कलकत्ते में
एक और लड़का था
उसीकी उमर का, शहर कलकत्ते में
दोनों खोजने काम और आज़ादी
लाश उनकी खोजने पर भी नहीं मिल पायी,
शहर कलकत्ते में शांति आयी।

एक थी मशीन
मुनाफ़े की भारी-भरकम, शहर कलकत्ते में
लाखों मज़दूरों को
करती रही हज़म, शहर कलकत्ते में
मज़दूर जो गला वह था बंगाली
मज़दूर जो पचा वह था भाई,
शहर कलकत्ते में शांति आयी।

एक थी लड़की
भूख और मार से काली, शहर कलकत्ते में
उसने अपराधी को
सज़ा देने की माँग कर डाली, शहर कलकत्ते में

बैठा रहा जज न्याय की कुर्सी पर गद्गद
कोतवाल ने उसकी अंतड़ियों में
गर्म छड़ घुसायी,
शहर कलकत्ते में शांति आयी।

रात-भर चीख़
और सन्नाटा, शहर कलकत्ते में
दिन भर ख़ून ने
पूरा किया घाटा, शहर कलकत्ते में
कोतवाल को नेता ने
नेता को सेठ ने
दी हृदय से बधाई,
शहर कलकत्ते में शांति आयी।

(1977)

भूख आदिवासी

देखा है कभी तुमने
उस निहंग आदिवासी भूख को
सड़कों पर नाचते हुए ?
सफ़ेदपोश नागरिकों के आगे
सलाम की अदा में झुका सिर
'मालिक, एक पैसा, दो पैसा
भगवान के लिए मालिक'
अक्षर-अक्षर गीत में ढलती हुई

ग़ुस्सा नहीं होती वह
ख़ुशी से चाटती है उनका थूक
पालतू कुत्ते की तरह रिरियाती है
पेट दिखाती है
महज़ एक फटा-पुराना डफ
ख़ाली अंतड़ियों की लय पर
हिलते हुए सूखे कूल्हे
भारी बेसुरी आवाज़
रोटी के नक़्शे से बड़े नहीं होते
उसके लिए देश, धर्म, क़ानून
और दीन-दुनिया
हथियारबंद अमीरी के बूटों तले

रौंदी हुई
आदमी की शुरुआत
ज़ख्मी और डरी-सहमी
अधनंगी छाती से लगे
बच्चे के कौर पर झपट्टा मारती
निर्मम चुंबनों के फफोले उगाती
हुई बेदम ममता

मालामाल सभ्यता के सजे-धजे
चूतड़ों पर चाबुक के तीखे
निशान-सी पड़ी
उजाड़ जंगलों से
शहरी जंगलों में फैलती
बर्बर आदिवासी भूख को
तुमने कभी देखा है ?

(1972)

उठो मेरे देश !

सुबह चौराहे पर खड़े
और बिकने का इंतज़ार करते हुए
उसे मैंने देखा

बिक जाने के बाद
उसे कहीं पुल बनाते हुए
इस्पात के खम्भे ढालते
धाराएँ मोड़कर रेगिस्तान को
हरे-भरे खेतों में बदलते
गढ़ते आलीशान इमारतें
फूले के पौधों को उगाते
खून-पसीना एक कर
हर क़िस्म के कपड़े
अनाज तैयार करने के बाद
गधे की तरह चुपचाप क़ंधों पर लादकर
बाज़ार की ओर बढ़ते हुए देखा
खामखाह उसके बारे में
बढ़ती गयी मेरी दिलचस्पी
शाम को पाया
कि ज़ोर-ज़ोर से कराहने लगा है वह
एक अँधेरी गंदी गली में पड़ा

बेघर अधनंगा
थककर चूर बड़बड़ा रहा है
भूख और अपमान से आकुल
उसके चेहरे पर मोटे हरफ़ों में लिखा है—
'मैं तुम्हारा गुलाम देश हूँ'
विश्वास नहीं हुआ आँखों पर
जैसे कोई अद्भुत दुर्घटना हो रही हो
'मैं तुम्हारा गुलाम देश हूँ'
पढ़ा उन स्याह चमकते
हरफ़ों को बार-बार
नहीं, इतना भूखा-नंगा
इस क़दर बीमार
अपमानित बेकार
मेरा देश नहीं हो सकता
किया इनकार मैंने साफ़-साफ़
उसे मानने से
सुनता रहा हूँ—
मेरा देश तो हवाई जहाज़ पर उड़ता है
बटन में गुलाब डाले
दुनिया की अमन-चैन के लिए
उड़ाता है कबूतर
केनेडी और ख्रुश्चेव के
बीचोंबीच होकर
अखबार में
किताबों और पत्रिकाओं में
टाटा-बिड़ला-सा अमीर है
रेडियो पर प्रेम और विरह की
धुनों में मस्त
समाजवाद और लोकतंत्र
मज़बूत करने में व्यस्त है, अधीर है
बदला उसने गोरे लुटेरों का हृदय
स्वतंत्रता माँगी
जो मिली भी
अब वह स्वाधीन है, सर्वोदय है

बिजली है, टेलीविज़न है, वायुयान हैं
शांति है, तटस्थता है
संसद और संविधान है
कुछ ऐसा ही सुनता रहा हूँ
उसके बारे में
लेकिन मुझे ग़लतफ़हमी हो गयी थी
उसी तरह जैसे काफ़्का की
कहानी का युवक जब बीमार
और बेकार हुआ
पिता ने, माँ ने, बहन ने
इनकार किया पहचानने से उसे
'नहीं, यह हमारा बेटा नहीं, भाई नहीं मेरा
यह तो घृणित तिलचट्टा है'
और उसे सौंप दिया था
अकेली दारुण मृत्यु को
भूल चुका था कुछ उसी तरह
अपने देश को
नहीं पहचान सका
मगर टूटता ही है आख़िरकार
भ्रमों का जाल, अफ़वाहों का सिलसिला
जेठ की दोपहर-सा कठोर सच
वह अब मेरे सामने था
अथक मेहनत और सूझ-बूझ से
दिन-रात मिट्टी के टुकड़ों को
कलाकार की जादुई प्रतिमा से
इमारतों, कपड़ों, फूलों और
अनाज के भारी गोदामों में
तब्दील करता हुआ
यही मेरा देश है
उसके हाथों बने महँगे
ख़ूबसूरत कपड़े जाल और कफ़न हैं
उसके लिए
ऊँची इमारतों में चमक आती है
उसके जलते झोंपड़ों से

फूल जो पत्थरों पर चढ़ते हैं
उसके ख़ून से पाते हैं रंग
और ख़ुशबू
गोदामों भरकर अनाज
दाने-दाने को मोहताज
तालाबंद गोदामों के बाहर
चक्कर काटता यही मेरा देश है
एक घबराये बेचैन इंतज़ार-सा
वह जिसे धोखा दिया गया
तमाम सालों से
साँस रोककर आने-जाने वालों से
पूछता है—'भाई ! कहीं आपने
मसीहा को इधर आते देखा ?
वायदा किया था उसने
पिछले चुनाव में
आयेगा जल्दी ही
मिटायेगा ग़रीबी दुख-दर्द
सर्दी में अकड़े शरीर पर
मोटे कम्बल-सी गर्मी
और ख़ुशी लायेगा
होंगे सब समान
किसी का दमन नहीं हो पायेगा'
जब कभी मिलती भी है
झलक मसीहा की
या उसकी ग़रीबी घट रही होती है
तनी होती हैं तब लाठियाँ
बेड़ियाँ-हथकड़ियाँ, दीवारें
आँसूगैस की
उसके और रोटी के बीच फ़ासला
और बढ़ जाता है
दिल्ली से जुड़ी सड़कें
ठंडी असहाय लाशों से
पट रही होती हैं
फिर भी वह इंतज़ार करता है

गुस्से में कभी-कभी गालियाँ
देते हुए
अंग्रेजों की गुलामी वाले दिनों पर
तरसता है
खाँस-खाँसकर—लो, यह रही
तुम्हारी आज़ादी —उल्टी कर देता है
खून की
ठठा कर हँसता है, गोया किसी का
मज़ाक उड़ा रहा हो।
भौंचक रह गया मैं
उसे देखकर
बंधक उम्र सूदखोर के द्वार पर
गिड़गिड़ाते
आदमी सवार को ढो-ढोकर थके
ताड़ी पीकर गिरे बेहोश।
'माँ, लोती नहीं दोगी ?
माँ, लोती हो ?
क्या खाऊँ, माँ ?
तुम बहुत हलामी हो
लोती हो, मालती हो मुझे
लोती नहीं दोगी ?'
भूखे तुतलाते सवालों को हवा में
उछाल गली के दाहिने मोड़ पर
कुत्ते से जूठी पत्तल छीनते
उस काले नंगे बच्चे को
भिखमंगे ! नपुंसक ! जानवर !
घृणा और गुस्से में पूरी ताक़त से
तमाचा जड़ दिया
भौंचक रह गया मैं रात को
उभर आये थे मेरी उँगलियों के
पाँचों निशान
मेरे शरीर पर
तपते बुखार में महसूस किया
वह मेरी धमनियों में बह रहा है

आँसुओं में ढलकर लावे-सा
पिघलकर जलते अमर्ष में
देश होता जा रहा हूँ मैं
मानो देखा हो पहली बार
अपने-आपको
अरबों हाथों के बावजूद लूला
लँगड़ा हूँ अरबों पैरों के बावजूद
करोड़ों आँखें मगर देख नहीं पाता
कंठ करोड़ों मगर कभी-कभी
महज़ भूंकने जैसी आवाज़
करके रह गया हूँ
हिमालय से कन्याकुमारी और
कच्छ से ब्रह्मपुत्र की लहरों तक
फैला हुआ
विराट शरीर कटा हुआ
वर्ग संप्रदाय और जाति के
टुकड़ों में बँटा हुआ
एक अंग से नष्ट करता हुआ दूसरे अंग को
आत्मघाती बौना हूँ
विराट बौने को मानो पहली बार देखा
स्वयं को
और देखा एक युगों पुरानी
लोहू पीने वाली मशीन को
जितना भी कहा जायेगा
या कहा जा सकेगा
उससे ज़्यादा ही क्रूर
ज़्यादा ही बर्बर
वह लोहू पीने वाली मशीन
बाहर से देखने पर एकदम मोहक है
एकदम चका-चौंध कर देती है
याद है, इसी के आगे
झुका है मेरा शिर कई बार अज्ञान में
भय में सम्मान में
लोकतंत्र और समाजवाद के नाम से

मशहूर इसी दानवी मशीन को
मैं देश मानता रहा
भीतर से देखा जब—
तहख़ानों में छिपे बैठे अपराधी
क़ानून की किताबों से ढँक रहे हैं
हत्या के विविध औज़ार
देश के अंग-प्रत्यंग को जकड़कर
प्रचंड वेग से वह मशीन
खेतों से, कारख़ानों से
ऑफ़िसों से खींचकर
सारा-का-सारा ख़ून
बोतलों में भरती है
और जहाज़ों के ज़रिये
अमेरिका-रूस-जर्मनी-जापान
पोलैंड-ब्रिटेन के बाज़ारों में
सस्ते दाम पर बिक्री करती है
देखा मैंने एक तरफ़ दलाल
रंग-बिरंगे झंडों और नारों का
नाटक खेलते तलवा चाटते लँगड़े देश का
लूले देश के हाथों में शब्दों की रोटियाँ
शब्दों के मकान शब्दों के कपड़े बाँटते
दलाल काग़ज़ की चिदियाँ थमा
अंधे देश से अपना चुनाव कराते
कुर्सियों के लिए एक-दूसरे को
ख़ून-सने दाँतों से काटते
दलाल
दलों के
दल-बदल के
दलदल में धँसाते
बेशुमार कर्ज़ के भार से दबे
देश को
पाँच साल
फिर पाँच साल
फिर पाँच साल

दलाल हर काम देश के हित में
करते
परदे के पीछे छिपे अपराधी
ज़मीन और पूंजी हड़पने की
खाता-बही भरते
लिख रहे हैं अंतर्राष्ट्रीय
मालिकों के नाम सब-कुछ
सही-सलामत जारी रखने का संदेश
हिंसा और फ़रेब के मज़बूत
खम्भों पर टिकी
लोहू पीने वाली मशीन
इतनी सफ़ाई से निबटा रही है
मामले को
कि दुश्मन दोस्त लगता है
मूर्च्छा की हालत में
देश खुद रख देता है गरदन
उसकी तलवार के नीचे
हैज़े से शहर की हिफ़ाज़त
और सफ़ाई कर
वह घृणित है, अछूत है, मेहतर है
और प्रेम में पलते हैं बेहतर हैं
विष्ठा और सम्भोग की
खुली प्रदर्शनी में लगे
विदेशी नस्ल के कुत्ते
जैसे ग़रीब किसान की ममता को
प्राण को, आत्मा को
बिटिया को सरेआम नंगा कर
ज़मींदार कोड़े लगाता है
देखा मैंने : किसान-मज़दूर देश की
असीम ममता को, उज्ज्वल प्राण को
विराट आत्मा को, सुंदर बिटिया को
वाशिंगटन-मास्को-लंदन की
सड़कों पर पिटते डॉलर के कोड़ों से
रूबल के कोड़ों से पिटते

निर्वासित और वियतनाम के
क़ातिलों की पैशाचिक वासना के
पंजों में जकड़ी धर्षित और घायल
एक वेश्या की शक्ल में
वियतनाम
धीरे-धीरे मेरा देश
वियतनाम-दक्षिण अफ़्रीका
गिनी-मोज़ाम्बीक तक फैल गया
भौंचक रह गया मैं फिर
उसे इस बार देखकर
गोरे साम्राज्य की काली ताक़त से
लड़ते चंपारण में
नौसैनिकों की बग़ावत में
पुलों-खम्भों को तोड़ते
बम फेंकते असेम्बली में
फाँसी के तख़्तों पर गाते हुए
सरफ़रोशी की तमन्ना लिये
तेभागा में, तेलंगाना में
नक्सलबाड़ी में भेड़ियों को खदेड़ते
किसान छापामार में बदलते
देश को अभी-अभी सुनता हूँ
वह गुजरात में
थालियाँ बजा-बजाकर
सूचना दे रहा है
आने वाले भूकंप की
योद्धा-बलिदानी-अपराजेय
देश को देख
मैं ख़ुशी और सम्मान से
चिल्ला उठा—मेरे देश का सही नाम
वियतनाम है
अमेरिकी जंगबाज़ों से
लोहा लेता हुआ वियतनाम
रूसी षड्यंत्र को
बेनक़ाब करता हुआ कम्बोडिया

मेरे देश का नाम है
शोषण और दमन की
विश्वव्यापी मशीन के विरुद्ध
अविराम युद्ध ही है
मेरे देश का सही परिचय
देशद्रोही क़रार दिया गया
उसे अंग्रेज़ों के ज़माने में
निर्वासित किया गया अपने घर से
लोहू पीने वाली मशीन ने
उसे भूना मशीनगन से
जलियाँवाला बाग में
आज दूसरे वेश में वही मशीन
देशद्रोही उसे घोषित कर
गोली मारती है
गिरफ़्तार करती है
उसकी जवान उम्मीदों को
अपराजेय विद्रोही देश को
मैंने सतर्क रहने की चेतावनी दी
हरी क्रांति और हिंसक शांति के
गहरे रिश्ते पर ध्यान दो
तुमसे भी अधिक कुशल हैं
ग़द्दार तुम्हारी भाषा बोलने में
दुश्मन ने झंडे का रंग
बदलकर लाल भी कर लिया है
संगठित करो
करोड़ों-करोड़ आग्नेय हाथों को
संगठित करो
तोड़ो सामंतों-दलाल पूँजीख़ोरों की
हिंसक लोहू पीने वाली मशीन को
तोड़ो
हिंसक हो उठो
मेरे ग़रीब किसान-मजदूर देश
मेरी वंचित ममता
मेरे लुटे हुए प्राण

मेरी निर्वासित आत्मा
मेरी अपमानित कविता
हिंसक हो उठो
माना कि निक्सन और ब्रेझनेव
शतरंज की गहरी चाल चलते हैं
प्रत्येक दाँव पर उनके
जलते हैं वियतनाम-कम्बोडिया
चिली-फ़िलिस्तीन
दलाल उनकी शह पर
तुम्हें कुचलते हैं
माना कि पुख़्ता है ख़ौफ़नाक है
लोहू पीने वाली मशीन
मगर अब चीन
पिंगपांग की गेंद से
बदल देता है शतरंज के मोर्चे
वियतनाम में मात खा चुका है
घेर लिया गया है दुश्मन
आग की बढ़ती लपटों से घिरे
नोमपेन्ह में
थाइलेंड में भदगड़ मच गयी है
और अगर तुम रोक-भर दो
अपने तमाम हाथ
यह मशीन ठप पड़ सकती है
कितना भारी व्यंग्य है
कि तुम्हारा लोहू पीने वाली
मशीन खुद को
तुम्हारे हाथों चलाती है
चल पाती है
याद रक्खो
कभी नहीं टूटतीं हथकड़ियाँ
खुद-ब-खुद
हरगिज़ बेड़ियाँ नहीं कहतीं
'जाओ, तुम्हें आज़ाद किया'
उन्हें चाहिए

धारदार अस्त्र की
भरपूर चोट
मुक्त होने के लिए
बंदूकों का मुँह मोड़ना पड़ता है
याद रक्खो
जहाँ क़ानून का मतलब
भूख-अपमान और ख़ून है
वहाँ भूख-अपमान और ख़ून का
हमलावर होना ही सही क़ानून है
समय फ़ैसला कर चुका है
तुम्हारे पक्ष में
पूरब लाल हो उठा है
उठो मेरे देश
आवाज़ देता हूँ
मैं तुम्हें करोड़ों कंठों से
अरबों पैरों में बाँधकर
तूफ़ान
उठो
धधको बग़ावत की
लोहू-सी लाल अदम्य
लपटों में।

(1974)

ज्योतिजी के लिए

गुहार

सपना

सूतल रहलीं सपन एक देखलीं
सपन मनभावन हो सखिया,
फूटलि किरनिया पुरुब असमनवा
उजर घर आँगन हो सखिया,
अँखिया के नीरवा भइल खेत सोनवा
त खेत भइलें आपन हो सखिया,
गोसयाँ के लठिया मुरइआ अस तूरलीं
भगवलीं महाजन हो सखिया,
केहू नाहीं ऊँच-नीच केहू के ना भय
नाहीं केहू बा भयावन हो सखिया,
मेहनति माटी चारों ओर चमकवली
ढहल इनरासन हो सखिया,
बइरी पइसवा के रजवा मेटवलीं
मिलल मोर साजन हो सखिया।

(1979)

कोइला

छक-छक-छक-छक रेलिया जो चलली
त कहवाँ से आइल रे कोइलवा !

धरती के छतिया बजर के अन्हरिया
जेकरा के तोड़ि अंग-अंग कइली करिया
जब हम जगमग जोतिया जरवलीं
त कहवाँ से आइल रे कोइलवा !

केहू के बा पूरा-पूरा केहू के बा टुकड़ा
केहू ललचावे, देखि केहू रोवे दुखड़ा
सोन्ह-सोन्ह रोटिया ई तउआ पर पकली
त कहवाँ से आइल रे कोइलवा !

चकमक सीसा अस चमके महलिया
मोहनी महलिया के ईंटा के देवलिया
आगि जब ईंटवा पर लाल रंग चढ़वली
त कहवाँ से आइल रे कोइलवा !

कहीं अवजार बने कहीं हथियरवा
दुनिया के बदले के चले जेसे करवा
धधकत भठिया में लोहवा गलवली
त कहवाँ से आइल रे कोइलवा !

(1978)

जनता के पलटनि

जनता के आवे पलटनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
हिलेला पहड़वा हिलेला नदी तलवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
सगरे में उठेला हिलोरवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
हिले लागे एसिया हिलेला अफरीकवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
हिलेला अमेरिका लतिनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
हिलेला युरोपवा हिलेला अमरीकवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
हिले लागे चारो महदीपवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
लाली पलटनिया के ललकी बनूकिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
लाल-लाल फहरे निसनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
मरकस अगुआ लेनिन बड़ अगुआ
हिलेले झकझोर दुनिया,

माओ देखलावेलें रोसनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ेलें गुलमवा लड़ेलें मजलूमवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ेलें गरीबवा बेकमवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ेलें किसनवा लड़ेलें मजदूरवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ें मिलि खूनवा पसेनवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ेली बहिनिया लड़ेली महतरिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ें सब दुख के सँगरिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
लड़ेलें अपढ़वा लड़ेलें पढ़गितिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
कहर मचावेलें जवनवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
ढहें महरजवा ढहन लागे रजवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
रानी करें धूरि में लोटनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
ढहें जमींदरवा ढहेलें पूंजीपतिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
ढहेलें दललवा फिरंगिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
ढहेले जुलुमिया ढहेले सब खूनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
ढहे लूटमार के कनुनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,
नकसलबड़िया से चलेले अगड़िया
हिलेले झकझोर दुनिया,
चारु के महान पलटनिया
हिलेले झकझोर दुनिया,

सिरिककुलमवा से आवे भोजपुरवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
अब आवे तोहरे सिवनवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
बहुते नियरवा अजदिया के दिनवा
हिलेले झकझोर दुनिया,
तूहू लेल तीरवा कमनवा
हिलेले झकझोर दुनिया ।

(1978)

गुहार

सुरु बा किसान के लड़इया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।
कब तक सुतब मूँदि के नयनवा
कब तक ढोवब सुख के सपनवा
फूटलि ललकि किरनिया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।
तोहरे पसीनवा से अनधन सोनवा
तोहरा के चूसि-चूसि बढ़े उनके तोनवा
तोह के बा मुट्ठी भर मकइया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।
तोहरे लरिकवन से फउजि बनावें
उनके बनूकि देके तोरे पर चलावें
जेल के बतावें कचहरिया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।
तोहरी अँगुरिया पर दुनिया टिकलिबा
बखरा में तोहरे नरके परलबा
उठ, भहरावे के ई दुनिया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।
जनमलि तोहरे खून से फउजिया
खेत करखनवा के ललकी फउजिया
तोहके बोलावे दिन रतिया, चल तूहूँ लड़े बदे भइया।

(1977)

अब नाहीं

गुलमिया अब हम नाहीं बजइबो, अजदिया हमरा के भावेले।
झीनी-झीनी बीनीं चदरिया लहरेले तोहरे कान्हे
जब हम तन के परदा माँगी आवे सिपहिया बान्हे
सिपहिया से अब नाहीं बन्हइबो, चदरिया हमरा के भावेले।
कंकड़ चुनि-चुनि महल बनवली हम भइली परदेसी
तोहरे कनुनिया मारल गइलीं कहवों भइल ना पेसी
कनुनिया अइसन हम नाहीं मनबो, महलिया हमरा के भावेले।
दिनवा खदनिया से सोना निकललीं रतिया लगवलीं अँगूठा
सगरो जिनगिया करजे में डूबलि कइल हिसबवा झूठा
जिनगिया अब हम नाहीं डुबइबो, अछरिया हमरा के भावेले।
हमरे जँगरवा से धरती फुलाले फुलवा में खुसबू भरेले
हमके बनुकिया से कइल बेदखली तोहरे मलिकई चलेले
धरतिया अब हम नाहीं गँवइबो, बनुकिया हमरा के भावेले।

(1978)

वोट

पहिले-पहिल जब वोट माँगे अइलें त बोले लगलें ना
तोहके खेतवा दिअइबो
ओमें फसलि उगइबो ।
बजड़ा के रोटिया देइ-देइ नूनवा
सोचली कि अब त बदली कनूनवा
अब जमीदरवा के पनही न सहबो
अब ना अकारथ बहे पाई खूनवा
दूसरे चुनउआ में जब उपरइलें त बोले लगलें ना
तोहके कुइँया खोनइबो
सब पिअसिया मेटइबो ।
ईंहवा से उड़ि-उड़ि ऊँहा जब गइलें
सोचलीं जमिनियाँ के बतियाँ भुलइलें
हमनीं के धीरे से जो मनवा परवलीं
जोर से कनुनिया, कनुनिया चिलइलें
तीसरे चुनउआ में चेहरा देखवलें त बोले लगलें ना
तोहके महल उठइबो
ओमें बिजुरी लगइबो ।
चमकलि बिजुरी त गोसियाँ दुअरिया
हमरी झोपड़िया में घहरे अन्हरिया
सोचलीं कि अब तक जेके-जेके चुनलीं
हमके बनावें सब काठ के पुतरिया

अबकी टपकिहें त कहबो कि देख तूं बहुत कइल ना
तोहके अब ना थकइबो
अपने हथवा उठइबो ।
हथवा में हमरे फसलिया भरलिबा
हथवा में हमरे लहरिया भरलिबा
एही हथवा से रूस अउरी चीन देस में
लूट के किलन पर बिजुरिया गिरलिबा
जब हम ईंहवों के किलवा ढहइबो त एही हाथे ना
तोहरो मटिया मिलइबो
ललका झण्डा फहरइबो ।
(1978)

खून-पसीना नगरिया लूटल
लखि-लखि धीरज के बन्हवा टूटल
अब हम किसान-मजूरा मिलिके
हक लेइब चोरन से छीन।
(1976)

जमीन

केकरे नाँवे जमीन पटवारी
केकरे नाँवे जमीन ?
कागज कइसन कलमिया कइसन
कइसन घोड़ा लगमिया कइसन
कोरट कचहरी में केकर सवारी
कइसन नियाव के जीन ?
केकर करनी आ केकर भरनी
केकर नाव केकर बैतरनी
केकरे जाँगर से माटीं फुलाइलि
के खाये चाउर महीन ?
जाड़ा, गरमी, बरखा न जनलीं
गोंहू ओसवलीं त भूसा बनली
काहें बरध सब खेतवा चरलें
हम भइलीं कउड़ी के तीन।
नालिस कईलीं दरोगवा आइल
बाबू के बँगला मुरगा कटाइल
मड़ई फूंकि तमाशा देखलें
चमकवलें संगीन।
जेकर धुरिए में जिनगी सिराइल
ओकर नउआ कहवाँ बिलाइल
जे धरती से दूरे रहेला
कइसे करेला अधीन !

समाजवाद

समाजवाद बबुआ, धीरे-धीरे आयी
समाजवाद उनके धीरे-धीरे आयी
हाथी से आयी
घोड़ा से आयी
अँगरेजी बाजा बजायी, समाजवाद...
नोटवा से आयी
वोटवा से आयी
बिड़ला के घर में समायी, समाजवाद...
गाँधी से आयी
आँधी से आयी
टुटही मड़इयो उड़ायी, समाजवाद...
काँगरेस से आयी
जनता से आयी
झंडा के बदली हो जायी, समाजवाद...
डालर से आयी
रूबल से आयी
देसवा के बान्हे धरायी, समाजवाद...
वादा से आयी
लबादा से आयी
जनता के कुरसी बनायी, समाजवाद...
लाठी से आयी

गोली से आयी
लेकिन अहिंसा कहायी, समाजवाद...
महँगी ले आयी
गरीबी ले आयी
केतनो मजूरा कमायी, समाजवाद...
छोटका के छोटहन
बड़का के बड़हन
बखरा बराबर लगायी, समाजवाद...
परसों ले आयी
बरसों ले आयी
हरदम अकासे तकायी, समाजवाद...
धीरे-धीरे आयी
चुपे-चुपे आयी
अँखियन पर परदा लगायी
समाजवाद उनके धीरे-धीरे आयी।

(1978)

जे माटी के चाहे

होइहें गरीबे गरीब के सहाई ।
राजा चाहें खून खराबी, रानी झाँसापट्टी
चोरवा रात अन्हरिया जेसे सेन्हिया लगाई ।
नेता चाहें बड़हन कुरसी हाकिम सुन्दर बँगला
जमींदार बेगारी जेसे बइठल मजा उड़ाई ।
पूंजीपति के एके चिन्ता कइसे बढ़े मुनाफा
ओकरे लेखे अदिमी बाटे रुपया अउरी पाई ।
जेकरे हाथे पड़लि हथकड़ी ऊहे तोड़ल चाही
पाँव बेवाई न जेकरे ऊ का जानी पीर पराई ।
लूटे अउर लुटाये वाला में का भाईचारा
एक म्यान के भीतर कइसे दू तलवार समाई ।
जोते-बोवे वाला के होई माटी से ममता
जे माटी के चाहे ओकर फल पर हक हो जाई ।
भूखा-नंगा रोटी-कपड़ा पर बोली झट धावा
जेकरे हाथ चले मिल ऊहे मिलके लड़ी लड़ाई ।

(1978)

(ब्रेख्ट के एक गीत से प्रभावित)

मैना

एक दिन राजा मरलें आसमान में ऊड़त मैना
बान्हि के घरे ले अइलें मैना ना ।
एकरे पिछले जनम के करम
कइलीं हम सिकार के धरम
राजा कहैं कुंअर से अब तू लेके खेल मैना
देख केतना सुन्दर मैना ना ।
खेले लगलें राजकुमार
उनके मन में बसल सिकार
पहिले पाँखि कतरि के कहलें अब तू उड़िजा मैना
मेहनत कै के उड़िजा मैना ना ।
पाँखि बिना के ऊड़े पाय
कुंअर के मन में गुस्सा छाय
तब फिर टाँग तोड़ि के कहलें अब तूं नाच मैना
ठुमकि-ठुमकि के नाच मैना ना ।
पाँव बिना के नाचे पाय
कुंअर गइलें अब बउराय
तब फिर गला दबा के कहलें अब तूं गाव मैना
प्रेम से मीठा गाव मैना ना ।
मरिके कइसे गावे पाय
कुंअर राजा के बुलवाय —
कहले बड़ा दुष्टबा एको बाति न माने मैना
सारा खेल बिगाड़ मैना ना ।

जबले खून पिअल ना जाय
तबले कवनो काम न आय
राजा कहें कि सीख कइसे चूसल जाई मैना
कइसे स्वाद बढ़ाई मैना ।

(1978)

नेह के पाँती

तूं हव स्रम के सुरुजवा हो, हम किरनिया तोहार
तोहरा से भगली बन्हनवा के रतिया
हमरा से हरियर भइली धरतिया
तूं हव जग के परनवा हो, हम संसरिया तोहार
तोहरा से डगरेला जिनगी के पहिया
हमरा से बन-बन उपजेले रहिया
रचना के हव तूं बसूलवा हो, हम रुखनिया तोहार
हमरा के छोड़िके न जइह बिदेसवा
जइह त भूलिह न भेजल सनेसवा
तूं हव नेहिया के पँतिया हो, हम अछरिया तोहार
तोहरे हथौड़वा से काँपे पूँजीखोरवा
हमरे हँसुअवा से हिले मूँड़खोरवा
तूं हव जूझे के पुकरवा हो, हम तुरहिया तोहार
चाहे जहाँ रह जो न मथवा झुकइब
हमरा के हरदम संगे-संगे पइब
तूं हव मुकुति के धरवा हो, हम लहरिया तोहार

(1978)

मेहनत के बारहमासा

हमरे सुगना के ले गइल बुखार सजना
नाहीं दवा-दारू नाहीं उपचार सजना
तोर मेहनत-मजूरी सब बेकार सजना
अस जिनगी जिअल धिरकार सजना

चले मेहनत से सबके अहार सजनी
बिना रोटी के न भनके सितार सजनी
हमरी मेहनत से रेल अउरी तार सजनी
हमरी मेहनत से रूप आ सिंगार सजनी
हमरी मेहनत से प्यार आ विचार सजनी
हम रोकि देईं हर आ कुदार सजनी
रुकि जिनगी के सुरसरिधार सजनी
बिचे पेदा भइलें अस घरियार सजनी
कि डूबावें हमही के मँझधार सजनी
अब्बों गाँव-गाँव रहें जमींदार सजनी
जइसे रहरी में रहेला हुड़ार सजनी
तोहरे सुगनवा अस सुगना हजार सजनी
रोज-रोज होलें इनके सिकार सजनी

छोड़ बहस करे ल तूं बेकार सजना
भइलि रेलिया सवतिया हमार सजना

तोहें ले गइल नजरिया के पार सजना
जइसे बीतल दिन, मास, पखवार सजना
कइसे कहीं जाने हियरा हमार सजना
धोती अस पेवन लागल मोर पियार सजना
कइली मँगनी के तीजि-तिउहार सजना
दिहलीं भूखिए के भेंट अँकवार सजना
ओपर आइल फुसलावे जमींदार सजना
ओकर बोलिया करेजा में कटार सजना
नाहीं छीने गइलीं ओकरे घरे नार सजना
गारी देत आइल 'बुजरी, छिनार' सजना
दू ठो गुंडा बोलवा के लठमार सजना
ढाहि दिहलसि माटी के दिवार सजना
ओकर कोठिया पर कोठिया अटार सजना
हमार एक भइल अँगना-दुआर सजना
ओकर जगमग घर पिछुआर सजना
ईहाँ दिया-बाती-तेल बिन अन्हार सजना
एतना उलटा चलेला संसार सजना
सब कुछ लागे माया के पसार सजना
ई गरीबी, मेहनत अत्याचार सजना
विधि लिखि दिहले हमरे लिलार सजना

दुख रोवले से मिलि नाहीं पार सजनी
कोड़ि खनि धरती दिहली सँवार सजनी
ओपर कबजा कइलें ठग-बटमार सजनी
उनके जूता सी के भइली हम चमार सजनी
उनके डोली ढोके हो गइली कहार सजनी
तेल पेरलीं उनके चमकल कपार सजनी
हम मइल भइलीं तेली-कलवार सजनी
गाड़ी गढ़लीं गढ़ली खुरपा-कुदार सजनी
हम कहल गइलीं बढ़ई-लोहार सजनी
जाति-पाँति के उठवलें दिवार सजनी
बाँटि दिहलें किसान परिवार सजनी
हम खटि-खटि हो गइलीं गँवार सजनी
ऊ अराम [illegible] भइलें हुसियार सजनी

भागि धरम-करम अवतार सजनी
एहि खून चुसवन के हथियार सजनी
उलटा चले नाहीं देब संसार सजनी
सगरो जिनगी पर बाटे हक हमार सजनी

बाति अइसने करेले सरकार सजना
ओकरा वोटवे से बाटे दरकार सजना
हमें केहू के न होला एतबार सजना
धूरि-माटी के बा जिनगी हमार सजना
मेघ ओनवे असाढ़ कजरार सजना
हर-बैल लेके चलल जवार सजना
धान रोपे गइली धनिया तोहार सजना
लेकिन घर में अकाल के पसार सजना
सावन खेत-खेत कजरी-मल्हार सजना
हम एक जूनि कइली अहार सजना
भादो मास में उपास के अधार सजना
रोवे मड़ई गरीबी के निहार सजना
नियराइल गवें-गवें जब कुआर सजना
फसल काटे गइलीं दुलवा बिसार सजना
उनके भरि दिहलीं सोना से बखार सजना
अपने घरे आइल बोझा दुइ चार सजना
चढल कातिक जोते बोवें के सुतार सजना
मास अगहन आसा पर तुसार सजना
तन लुगरी भइल तार-तार सजना
पूस-माघ में उपास में अधार सजना
चुभे हाड़ निरमोहिया बयार सजना
फागुन-चइत काटे दाँवे के लहार सजना
पेट कटलो पर करजा सवार सजना
धरती तवे बइसाख के मझार सजना
एक ठो रोटी दिन-दिन-भर कुदार सजना
रंग देहि के भइल जरि छार सजना
फिर से जेठ में उपासे को अधार सजना
तूहूँ गइल नजरिया के पार सजना
अस जिनगी जिअल धिरकार सजना

एक त करजे के बड़ा भारी मार सजनी
दूजे झूलनी के धक्का बरियार सजनी
उड़ि गइलीं कलकतिया बजार सजनी
जहाँ मेहनत के बड़े खरीदार सजनी
बड़े पूंजीपति सहरी हुड़ार सजनी
बड़े नेता बड़े रँगुआ सियार सजनी
बड़ा हबड़ा के पुल ट्राम-कार सजनी
छोड़ि आदिमी के सब बड़बार सजनी
केहू पइसा के जोड़ेला पहाड़ सजनी
केहू हाँफि-हाँफि खींचेला पहाड़ सजनी
पढगितियन के लमहर कतार सजनी
पहिले लिखें फिर पढ़ें कि 'बेकार' सजनी
ऊँहा मेम लोग बड़ी मजेदार सजनी
पहिने कपड़ा त लउकें उघार सजनी
हिंदी बोलें अंगरेजी में बघार सजनी
सेठ नाचघर बनावें रँगदार सजनी
साहब मेम के नचावे पुचकार सजनी
करें नाचे के आजादी के प्रचार सजनी
जइसे नाचे आजुकालि सरकार सजनी
कब्बो रूस आगे अँचरा पसार सजनी
कब्बो चले अमरीका के बजार सजनी
सरल गोहूँ देके देके हथियार सजनी
भइले दूनू हमरी छाती पर सवार सजनी
सबसे भारी डाकू सबसे हतियार सजनी
रूस अउरी अमरीका के हुड़ार सजनी
लूटि देस-देस करे खयकार सजनी
धौंस-धमकी चलावें बमवार सजनी
जब लोग भइलें बहुते लाचार सजनी
सुरू कइलें लड़ाई छापामार सजनी
एकरो बाटे कलकत्ता में प्रचार सजनी
हम कइसो-कइसो पवली मिल में कार सजनी
खटलीं पइसा बदे रोज उपरवार सजनी
एक दिन राय कइले सब कामगार सजनी
खून चूसि बढ़े पूंजी बेसुमार सजनी

बढ़ें महँगी, घटे जिनगी हमार सजनी
मिलि-जुलि घेरली सेठ के दुआर सजनी
गोली मरलें सिपाही धुआँधार सजनी
खून-खून भइल सेठ के दुआर सजनी
हिया काँपल देखि सीधे अत्याचार सजनी
धीरे-धीरे जनलीं एकरो अधार सजनी
खून चूस, देस बेचवा, लबार सजनी
ई दलाल पूंजीपति जमींदार सजनी
फउजि, कोरट-कचहरी सरकार सजनी
हमें लूटे बदे कइलें तइयार सजनी
इनसे निपट के एके रस्ता-मार सजनी
जब हम मिलि उठाइबि हथियार सजनी
मचि चारों ओर भारी हाहाकार सजनी
भागे लगिहें देस छोड़िके हुड़ार सजनी
आवे कल-कारखाना से पुकार सजनी

अब गाँव-गाँव हो जा तइयार सजना

गाँठि बान्ह लेनिन-माओ के विचार सजनी

बिना क्रांति के न होई उधियार सजना

(1975)

□ □